ISSN: 2393-8048
International Advance Journal of Engineering, Science and Management (IAJESM)
Multidisciplinary, Multilingual, Indexed, Double Blind, Open Access, Peer-Reviewed, Refereed-International Journal.
SJIF Impact Factor = 8.35, July-December 2026, Submitted in July 2026

वेदांतदर्शन में वर्णित अनुबंधचतुष्ट्य

श्रीमती राजकुमारी, सहआचार्य, संस्कृत विभागाध्यक्ष, महारानी श्री जया राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय भरतपुर (राज०)

शोधसार

वेदांत दर्शन भारतीय दार्शनिक परंपरा का सर्वोच्च एवं सर्वाधिक प्रभावशाली दर्शन माना जाता है। इसका मूल उद्देश्य जीव, जगत एवं ब्रह्म के वास्तविक स्वरूप का प्रतिपादन करते हुए मोक्ष की प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करना है। वेदांत के किसी भी ग्रंथ का अध्ययन प्रारम्भ करने से पूर्व जिस मूलभूत सिद्धांत का विचार किया जाता है, उसे **अनुबंधचतुष्ट्य** कहा जाता है। 'अनुबंध' का अर्थ है—वह आधार जिसके कारण किसी ग्रंथ का अध्ययन सार्थक होता है, जबकि 'चतुष्ट्य' का अर्थ है—चार तत्व। इस प्रकार अनुबंधचतुष्ट्य के अंतर्गत चार आवश्यक विषयों **अधिकारी, विषय, संबंध एवं प्रयोजन** का विवेचन किया जाता है। ये चारों तत्व किसी भी शास्त्र की उपयोगिता, अध्ययन-पद्धति तथा अंतिम उद्देश्य को स्पष्ट करते हैं। वेदांत दर्शन में अधिकारी वह साधक है जो विवेक, वैराग्य, षट्सम्पत्ति तथा मुमुक्षुत्व जैसे साधन-चतुष्टय से युक्त हो। विषय ब्रह्मविद्या अथवा ब्रह्म-आत्मैक्य का ज्ञान है। संबंध का तात्पर्य शास्त्र तथा प्रतिपाद्य विषय के मध्य प्रतिपादक-प्रतिपाद्य संबंध से है, जबकि प्रयोजन का अंतिम लक्ष्य अविद्या का नाश कर मोक्ष की प्राप्ति है। अनुबंधचतुष्ट्य न केवल वेदांत के अध्ययन की औपचारिक भूमिका है, बल्कि यह समस्त भारतीय शास्त्रीय परंपरा की अनुसंधान-पद्धति का आधार भी है। वर्तमान समय में जहाँ शिक्षा अधिकतर व्यावसायिक एवं सूचना-प्रधान होती जा रही है, वहाँ अनुबंधचतुष्ट्य की अवधारणा अध्ययन को उद्देश्यपूर्ण, अनुशासित एवं मूल्यपरक बनाती है। यह शोध-पत्र वेदांत में वर्णित अनुबंधचतुष्ट्य की दार्शनिक व्याख्या, उसकी शास्त्रीय पृष्ठभूमि, आधुनिक शिक्षा एवं अनुसंधान में उसकी उपयोगिता तथा समकालीन प्रासंगिकता का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अनुबंधचतुष्ट्य केवल दार्शनिक सिद्धांत नहीं, बल्कि ज्ञानार्जन की एक वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित पद्धति है, जो आज भी शिक्षा, शोध तथा व्यक्तित्व विकास के लिए समान रूप से उपयोगी है।

मुख्य शब्द: वेदांत दर्शन, अनुबंधचतुष्ट्य, अधिकारी, विषय, संबंध, प्रयोजन, ब्रह्मविद्या, मोक्ष, भारतीय दर्शन।

प्रस्तावना

भारतीय दर्शन विश्व की प्राचीनतम एवं समृद्ध दार्शनिक परंपराओं में से एक है, जिसका मूल उद्देश्य केवल बौद्धिक जिज्ञासा की पूर्ति करना नहीं, बल्कि मानव जीवन के परम कल्याण, आत्मबोध तथा मोक्ष की प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करना है। भारतीय दार्शनिक चिंतन में ज्ञान को जीवनोपयोगी, अनुभवपरक एवं आध्यात्मिक विकास का साधन माना गया है। इसी परंपरा में वेदांत दर्शन का विशेष स्थान है, क्योंकि यह उपनिषदों, *ब्रह्मसूत्र* तथा *भगवद्गीता* पर आधारित होकर ब्रह्म, जीव, जगत तथा उनके पारस्परिक संबंधों का गहन एवं तात्त्विक विवेचन प्रस्तुत करता है। वेदांत का मूल प्रतिपाद्य यह है कि ब्रह्म ही परम सत्य है तथा आत्मा का वास्तविक स्वरूप ब्रह्म के साथ अभिन्न है। इस सत्य का प्रत्यक्ष ज्ञान ही मानव जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य अर्थात् मोक्ष माना गया है। इसलिए वेदांत दर्शन केवल एक दार्शनिक सिद्धांत नहीं, बल्कि आत्मानुभूति, नैतिकता, विवेक एवं आध्यात्मिक उन्नति का व्यावहारिक मार्ग भी है।

भारतीय शास्त्रीय परंपरा में किसी भी ग्रंथ अथवा शास्त्र के अध्ययन का प्रारंभ बिना उद्देश्य एवं पद्धति के नहीं किया जाता। प्रत्येक शास्त्र यह स्पष्ट करता है कि उसका अध्ययन कौन करे, उसका प्रतिपाद्य विषय क्या है, अध्ययन से क्या लाभ होगा तथा ग्रंथ और प्रतिपाद्य विषय के मध्य किस प्रकार का संबंध है। इन चार मूलभूत प्रश्नों का समन्वित उत्तर **अनुबंधचतुष्ट्य** के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। 'अनुबंध' का अर्थ है वह आधार या आवश्यक संबंध जिसके कारण किसी शास्त्र का अध्ययन सार्थक एवं फलदायी होता है, जबकि 'चतुष्ट्य' का अर्थ है—चार अनिवार्य तत्त्व। इस प्रकार अनुबंधचतुष्ट्य में **अधिकारी, विषय, संबंध तथा प्रयोजन**—इन चार तत्वों का समावेश होता है। भारतीय मीमांसा, न्याय, वेदांत तथा अन्य शास्त्रों में अनुबंधचतुष्ट्य को शास्त्र-अध्ययन की अनिवार्य प्रस्तावना माना गया है, क्योंकि इसके अभाव में अध्ययन की दिशा, उद्देश्य एवं परिणाम स्पष्ट नहीं हो पाते।

वेदांत दर्शन में अनुबंधचतुष्ट्य का विशेष महत्व है, क्योंकि ब्रह्मविद्या अत्यंत सूक्ष्म, गूढ़ एवं अनुभवप्रधान ज्ञान है। इसका अध्ययन केवल बौद्धिक अभ्यास नहीं, बल्कि साधक के अंतःकरण की शुद्धि, विवेक, वैराग्य एवं आध्यात्मिक पात्रता पर आधारित होता है। इसलिए वेदांताचार्यों ने यह प्रतिपादित किया कि ब्रह्मज्ञान का अधिकारी वही है जो नित्य-अनित्य वस्तुओं का विवेक, विषय-भोगों के प्रति वैराग्य, मन एवं इन्द्रियों का संयम तथा मोक्ष की तीव्र इच्छा से युक्त हो। यही कारण है कि वेदांत में अनुबंधचतुष्ट्य का प्रथम अंग 'अधिकारी' है। इसी प्रकार वेदांत का प्रतिपाद्य विषय जीव और ब्रह्म की वास्तविक सत्ता का विवेचन है; शास्त्र एवं प्रतिपाद्य विषय के मध्य प्रतिपादक-प्रतिपाद्य संबंध स्थापित किया जाता है; तथा प्रयोजन के रूप में अविद्या का नाश, आत्मज्ञान एवं मोक्ष की प्राप्ति को स्वीकार किया गया है। इस प्रकार अनुबंधचतुष्ट्य वेदांत अध्ययन की दार्शनिक रूपरेखा एवं पद्धतिगत आधार प्रदान करता है।

वेदांत के प्रमुख आचार्यों—आदि शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य, वल्लभाचार्य तथा निम्बार्काचार्य ने अपने-अपने दार्शनिक मतों के अनुरूप अनुबंधचतुष्ट्य की व्याख्या की है। यद्यपि इन आचार्यों के दार्शनिक निष्कर्षों में कुछ मतभेद दिखाई देते हैं, तथापि सभी इस तथ्य से सहमत हैं कि शास्त्र का अध्ययन तभी सार्थक है जब अध्ययनकर्ता योग्य हो, विषय स्पष्ट हो, शास्त्र और विषय का संबंध स्थापित हो तथा अध्ययन का अंतिम उद्देश्य आत्मकल्याण एवं मोक्ष हो। इससे स्पष्ट होता है कि अनुबंधचतुष्ट्य केवल औपचारिक भूमिका नहीं, बल्कि समस्त वेदांत दर्शन की ज्ञानमीमांसात्मक एवं शिक्षाशास्त्रीय आधारशिला है।

समकालीन शिक्षा एवं अनुसंधान की दृष्टि से भी अनुबंधचतुष्ट्य की अवधारणा अत्यंत प्रासंगिक है। आधुनिक शोध-पद्धति में भी अनुसंधानकर्ता की योग्यता, शोध-विषय का स्पष्ट निर्धारण, उद्देश्य, अनुसंधान की आवश्यकता तथा अध्ययन की उपयोगिता को अत्यधिक महत्व दिया जाता है। ये सभी तत्व अनुबंधचतुष्ट्य के चार अंगों से गहरे रूप में संबद्ध हैं। इस प्रकार यह सिद्धांत केवल पारंपरिक वेदांत अध्ययन तक सीमित नहीं है, बल्कि आधुनिक शिक्षा, अनुसंधान, नैतिक नेतृत्व, व्यक्तित्व विकास तथा मूल्य-आधारित ज्ञानार्जन के लिए भी समान रूप से उपयोगी है। वर्तमान समय में जब शिक्षा का केंद्र केवल सूचना-संग्रह या व्यावसायिक सफलता तक सीमित होता जा रहा है, तब अनुबंधचतुष्ट्य अध्ययन को उद्देश्यपूर्ण, उत्तरदायी एवं आत्मविकासोन्मुख बनाने की प्रेरणा देता है।

प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य वेदांत दर्शन में वर्णित अनुबंधचतुष्ट्य की अवधारणा का दार्शनिक, शास्त्रीय एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन करना है। इस अध्ययन में अनुबंधचतुष्ट्य के चारों अंगों का विस्तृत विवेचन, वेदांत के प्रमुख आचार्यों के मतों का तुलनात्मक विश्लेषण, ब्रह्मविद्या के अध्ययन में इसकी अनिवार्यता तथा आधुनिक शिक्षा एवं अनुसंधान में इसकी प्रासंगिकता का सम्यक् परीक्षण किया जाएगा। साथ ही यह भी स्पष्ट करने का प्रयास किया जाएगा कि अनुबंधचतुष्ट्य केवल वेदांत के अध्ययन की प्रारंभिक औपचारिकता नहीं, बल्कि ज्ञान, साधना एवं जीवन के समन्वित विकास का एक सार्वकालिक एवं वैज्ञानिक सिद्धांत है, जो आज भी भारतीय ज्ञान-परंपरा की मौलिकता एवं प्रासंगिकता को प्रमाणित करता है।

वेदांत दर्शन का स्वरूप एवं विकास

वेदांत दर्शन भारतीय आस्तिक दर्शन की अत्यंत महत्वपूर्ण एवं परिपक्व शाखा है, जिसका मूल **आधार उपनिषद्, ब्रह्मसूत्र** तथा **श्रीमद्भगवद्गीता** हैं। इन तीनों ग्रंथों को संयुक्त रूप से **प्रस्थानत्रयी** कहा जाता है। 'वेदांत' शब्द का शाब्दिक अर्थ है—'वेदों का अंत' अथवा 'वेदों का सार'। यहाँ 'अंत' का तात्पर्य केवल वेदों के अंतिम भाग से नहीं, बल्कि उनके परम तात्त्विक निष्कर्ष से है। वेदांत दर्शन का प्रमुख उद्देश्य ब्रह्म, जीव, जगत तथा उनके पारस्परिक संबंधों का विवेचन करते हुए आत्मज्ञान के माध्यम से मोक्ष की प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करना है। यह दर्शन मानता है कि ब्रह्म ही परम सत्य, शाश्वत एवं सर्वव्यापी सत्ता है तथा आत्मा का वास्तविक स्वरूप उसी ब्रह्म से अभिन्न अथवा उसके साथ विशिष्ट संबंध रखने वाला है। इसी सत्य का प्रत्यक्ष ज्ञान मानव जीवन का परम पुरुषार्थ माना गया है।

वेदांत दर्शन का विकास वैदिक साहित्य के उत्तरकालीन चरण में उपनिषदों के दार्शनिक चिंतन से प्रारंभ हुआ। उपनिषदों में प्रतिपादित ब्रह्मविद्या को महर्षि **बादरायण** ने *ब्रह्मसूत्र* के माध्यम से व्यवस्थित एवं सूत्रबद्ध स्वरूप प्रदान किया। कालांतर में आदि शंकराचार्य ने अद्वैत वेदांत, रामानुजाचार्य ने विशिष्टाद्वैत, मध्वाचार्य ने द्वैत, वल्लभाचार्य ने शुद्धाद्वैत तथा निम्बार्काचार्य ने द्वैताद्वैत दर्शन का प्रतिपादन कर वेदांत की विभिन्न व्याख्यात्मक परंपराओं को विकसित किया। यद्यपि इन आचार्यों के मतों में ब्रह्म, जीव एवं जगत के संबंध को लेकर वैचारिक भिन्नताएँ हैं, तथापि सभी का अंतिम लक्ष्य आत्मज्ञान, ईश्वर-साक्षात्कार एवं मोक्ष की प्राप्ति ही है। इस प्रकार वेदांत दर्शन भारतीय ज्ञान-परंपरा का ऐसा जीवंत एवं गतिशील दर्शन है, जिसने आध्यात्मिकता, नैतिकता, तर्क एवं अनुभव का समन्वय करते हुए भारतीय संस्कृति और दर्शन को गहन दार्शनिक आधार प्रदान किया है।

अनुबंधचतुष्ट्य की अवधारणा

भारतीय दार्शनिक परंपरा में किसी भी शास्त्र, ग्रंथ अथवा ज्ञान-विषय के अध्ययन को सुव्यवस्थित एवं उद्देश्यपूर्ण बनाने के लिए **अनुबंधचतुष्ट्य** की अवधारणा को अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया है। 'अनुबंध' शब्द का अर्थ है—वह आवश्यक संबंध, आधार या पूर्वापेक्षा जिसके कारण किसी शास्त्र का अध्ययन सार्थक एवं फलदायी होता है, जबकि 'चतुष्ट्य' का अर्थ है चार अनिवार्य तत्त्व। इस प्रकार अनुबंधचतुष्ट्य का तात्पर्य उन चार मूलभूत तत्वों से है जिनके बिना किसी भी शास्त्र का अध्ययन पूर्ण एवं उद्देश्यपूर्ण नहीं माना जाता। ये चार तत्व हैं **अधिकारी (योग्य अध्ययनकर्ता), विषय (प्रतिपाद्य विषय), संबंध (शास्त्र और प्रतिपाद्य विषय का संबंध) तथा प्रयोजन (अध्ययन का उद्देश्य या फल)**। भारतीय मीमांसा, न्याय, वेदांत तथा अन्य दार्शनिक परंपराओं में किसी भी ग्रंथ की प्रस्तावना में इन चारों का उल्लेख कर यह स्पष्ट किया जाता है कि अध्ययन किसके लिए है, किस विषय का प्रतिपादन किया जा रहा है, उसका आधार क्या है तथा उससे साधक को क्या लाभ प्राप्त होगा।

वेदांत दर्शन में अनुबंधचतुष्ट्य का विशेष महत्व है क्योंकि इसका प्रतिपाद्य विषय अत्यंत सूक्ष्म एवं आध्यात्मिक है। वेदांत केवल सैद्धांतिक ज्ञान नहीं, बल्कि आत्मानुभूति एवं ब्रह्मज्ञान का मार्ग है। इसलिए इस ज्ञान को ग्रहण करने वाले साधक में विवेक, वैराग्य, शम, दम, उपरति, तितिक्षा, श्रद्धा, समाधान तथा मोक्ष की तीव्र इच्छा जैसे गुणों का होना अपेक्षित माना गया है। वेदांत के अनुसार अधिकारी वही है जो साधन-चतुष्टय से सम्पन्न हो; विषय ब्रह्म और आत्मा के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान है; संबंध शास्त्र और ब्रह्मविद्या के मध्य प्रतिपादक-प्रतिपाद्य संबंध है; तथा प्रयोजन अविद्या का नाश, आत्मसाक्षात्कार और मोक्ष की प्राप्ति है। इस प्रकार अनुबंधचतुष्ट्य वेदांत अध्ययन की दिशा, पद्धति और लक्ष्य को स्पष्ट करता है।

दार्शनिक दृष्टि से अनुबंधचतुष्ट्य केवल शास्त्रीय औपचारिकता नहीं, बल्कि ज्ञान की वैज्ञानिक संरचना का आधार है। आधुनिक अनुसंधान-पद्धति में भी शोधकर्ता, शोध-विषय, अध्ययन की प्रासंगिकता तथा उद्देश्य को स्पष्ट करना अनिवार्य माना जाता है। यह संरचना अनुबंधचतुष्ट्य के सिद्धांत से अत्यंत साम्य रखती है। अतः यह कहा जा सकता है कि अनुबंधचतुष्ट्य भारतीय ज्ञान-परंपरा की एक सुव्यवस्थित दार्शनिक एवं शिक्षाशास्त्रीय अवधारणा है, जो अध्ययन को उद्देश्यपूर्ण, तार्किक, अनुशासित एवं परिणामोन्मुख बनाती है। वेदांत दर्शन में इसका महत्व इसलिए और अधिक है क्योंकि यही सिद्धांत साधक को ब्रह्मविद्या के अध्ययन के लिए पात्र बनाते हुए उसे आत्मज्ञान एवं मोक्ष की दिशा में अग्रसर करता है।

अनुबंधचतुष्ट्य के चार अंग

वेदांत दर्शन में **अनुबंधचतुष्ट्य** शास्त्र-अध्ययन का आधारभूत सिद्धांत है, जिसके माध्यम से किसी भी ग्रंथ के अध्ययन की पात्रता, विषय-वस्तु, उद्देश्य तथा उसकी प्रामाणिकता का निर्धारण किया जाता है। 'अनुबंधचतुष्ट्य' के चार प्रमुख अंग हैं **अधिकारी, विषय, संबंध एवं प्रयोजन**। ये चारों तत्व परस्पर संबद्ध हैं और किसी भी दार्शनिक ग्रंथ की सार्थकता एवं उपयोगिता को स्पष्ट करते हैं। भारतीय शास्त्रीय परंपरा के अनुसार यदि इन चारों का समुचित ज्ञान न हो तो शास्त्र-अध्ययन न तो व्यवस्थित हो सकता है और न ही उसका अपेक्षित फल प्राप्त हो सकता है।

अधिकारी अनुबंधचतुष्ट्य का प्रथम एवं अत्यंत महत्वपूर्ण अंग है। अधिकारी से अभिप्राय उस योग्य साधक या विद्यार्थी से है जो शास्त्र-अध्ययन करने की पात्रता रखता हो। वेदांत के अनुसार ब्रह्मविद्या का अधिकारी वही है जो **साधन-चतुष्टय** नित्यानित्य वस्तु विवेक, इहामुत्र फलभोग-विराग, षट्सम्पत्ति (शम, दम, उपरति, तितिक्षा, श्रद्धा एवं समाधान) तथा मुमुक्षुत्व से युक्त हो। ऐसा साधक ही ब्रह्मज्ञान को आत्मसात् करने में समर्थ होता है।

विषय अनुबंधचतुष्ट्य का दूसरा अंग है। विषय का अर्थ है—वह प्रतिपाद्य तत्त्व जिसका शास्त्र में विवेचन किया गया हो। वेदांत का मुख्य **विषय ब्रह्म, जीव, जगत** तथा उनके पारस्परिक संबंध का तात्त्विक विवेचन है। उपनिषदों का महावाक्य *"तत्त्वमसि"* तथा *"अहं ब्रह्मास्मि"* इसी विषय का प्रतिपादन करते हैं। वेदांत का लक्ष्य आत्मा और ब्रह्म की वास्तविक सत्ता का ज्ञान कराना है।

संबंध अनुबंधचतुष्ट्य का तीसरा अंग है। इसका आशय शास्त्र और उसके प्रतिपाद्य विषय के मध्य विद्यमान संबंध से है। वेदांत में यह संबंध **प्रतिपादक–प्रतिपाद्य संबंध** कहलाता है। अर्थात् उपनिषद्, *ब्रह्मसूत्र* और *भगवद्गीता* जैसे शास्त्र ब्रह्मविद्या के प्रतिपादक हैं तथा ब्रह्म उनका प्रतिपाद्य विषय है। इसी संबंध के कारण शास्त्र प्रमाण के रूप में स्वीकार किए जाते हैं और साधक को सत्य का यथार्थ ज्ञान प्राप्त होता है।

प्रयोजन अनुबंधचतुष्टय का अंतिम एवं सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग है। प्रयोजन से तात्पर्य उस फल या उद्देश्य से है जिसकी प्राप्ति के लिए शास्त्र का अध्ययन किया जाता है। वेदांत में इसका सर्वोच्च प्रयोजन **अविद्या का नाश, आत्मसाक्षात्कार तथा मोक्ष की प्राप्ति** है। ब्रह्मज्ञान के माध्यम से मनुष्य जन्म-मरण के बंधनों से मुक्त होकर परम शांति एवं आनन्द की अवस्था को प्राप्त करता है। यही वेदांत का परम पुरुषार्थ माना गया है।

इस प्रकार अधिकारी, विषय, संबंध एवं प्रयोजन ये चारों अंग मिलकर अनुबंधचतुष्टय की पूर्ण संरचना का निर्माण करते हैं। ये न केवल वेदांत दर्शन के अध्ययन की पद्धति को स्पष्ट करते हैं, बल्कि ज्ञानार्जन की एक वैज्ञानिक, तार्किक एवं उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया भी प्रस्तुत करते हैं। आधुनिक शिक्षा एवं अनुसंधान में भी अध्ययनकर्ता की पात्रता, विषय का चयन, अनुसंधान की प्रासंगिकता तथा उद्देश्य की स्पष्टता को अत्यधिक महत्व दिया जाता है। इसलिए अनुबंधचतुष्टय की यह अवधारणा आज भी उतनी ही प्रासंगिक है जितनी प्राचीन भारतीय दार्शनिक परंपरा में थी।

वेदांत के प्रमुख ग्रंथों में अनुबंधचतुष्टय

वेदांत दर्शन का आधार **प्रस्थानत्रयी उपनिषद्, ब्रह्मसूत्र एवं श्रीमद्भगवद्गीता** है। इन तीनों ग्रंथों में प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से **अनुबंधचतुष्टय** की अवधारणा विद्यमान है। यद्यपि इन ग्रंथों में 'अनुबंधचतुष्टय' शब्द का प्रत्येक स्थान पर स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता, तथापि इनके भाष्यों एवं टीकाओं में वेदांताचार्यों ने अधिकारी, विषय, संबंध तथा प्रयोजन का विस्तृत निरूपण किया है। भारतीय शास्त्रीय परंपरा में यह माना गया है कि किसी भी शास्त्र का अध्ययन तभी सार्थक होता है जब उसके अध्ययनकर्ता की पात्रता, प्रतिपाद्य विषय, शास्त्र और विषय के मध्य संबंध तथा अध्ययन का अंतिम उद्देश्य स्पष्ट हो। यही कारण है कि वेदांत के प्रमुख ग्रंथों की प्रस्तावना एवं भाष्य परंपरा में अनुबंधचतुष्टय को विशेष महत्व दिया गया है।

उपनिषदों में अनुबंधचतुष्टय का स्वरूप अत्यंत स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। उपनिषदों का मुख्य विषय ब्रह्मविद्या एवं आत्मविद्या है, जिसका उद्देश्य जीव और ब्रह्म की एकता का बोध कराना है। *छांदोग्य उपनिषद्* का महावाक्य **"तत्त्वमसि"**, *बृहदारण्यक उपनिषद्* का **"अहं ब्रह्मास्मि"**, *ऐतरेय उपनिषद्* का **"प्रज्ञानं ब्रह्म"** तथा *माण्डूक्य उपनिषद्* का **"अयमात्मा ब्रह्म"** आत्मा और ब्रह्म की अभिन्नता का प्रतिपादन करते हैं। इन उपनिषदों में अधिकारी वह साधक है जो श्रद्धा, तप, ब्रह्मचर्य, आत्मसंयम एवं सत्यनिष्ठा से युक्त हो; विषय ब्रह्म का स्वरूप है; संबंध उपनिषदों द्वारा ब्रह्मज्ञान का प्रतिपादन है; तथा प्रयोजन आत्मज्ञान के माध्यम से मोक्ष की प्राप्ति है।

ब्रह्मसूत्र, जिसके रचयिता महर्षि **बादरायण** माने जाते हैं, वेदांत दर्शन का सूत्रग्रंथ है। इसका प्रथम सूत्र **"अथातो ब्रह्मजिज्ञासा"** अनुबंधचतुष्टय की अवधारणा को प्रत्यक्ष रूप से व्यक्त करता है। यहाँ 'अथ' का अर्थ अधिकारी की पात्रता से, 'ब्रह्मजिज्ञासा' का संबंध विषय से तथा समस्त ग्रंथ का प्रयोजन ब्रह्मज्ञान एवं मोक्ष से है। ब्रह्मसूत्र के भाष्यों में आदि शंकराचार्य, रामानुजाचार्य तथा मध्वाचार्य ने अनुबंधचतुष्टय का अत्यंत व्यवस्थित एवं दार्शनिक विवेचन किया है। उनके अनुसार ब्रह्मसूत्र का अधिकारी वही साधक है जो साधन-चतुष्टय से सम्पन्न हो तथा ब्रह्मविद्या के प्रति गंभीर जिज्ञासा रखता हो।

श्रीमद्भगवद्गीता में भी अनुबंधचतुष्टय की अवधारणा व्यावहारिक एवं आध्यात्मिक दोनों स्तरों पर दृष्टिगोचर होती है। गीता का अधिकारी अर्जुन के माध्यम से समस्त मानव समाज को माना गया है, विशेषतः वह व्यक्ति जो जीवन के संकटों, मोह एवं संशय से मुक्त होकर सत्य की खोज करना चाहता है। गीता का विषय आत्मा, परमात्मा, कर्म, ज्ञान, भक्ति एवं योग का समन्वित विवेचन है। श्रीकृष्ण द्वारा प्रदत्त उपदेश प्रतिपादक के रूप में तथा आत्मज्ञान प्रतिपाद्य के रूप में संबंध को स्पष्ट करते हैं। गीता का प्रयोजन केवल युद्ध के लिए प्रेरित करना नहीं, बल्कि निष्काम कर्म, ज्ञानयोग, भक्तियोग एवं आत्मसमर्पण के माध्यम से मोक्ष की प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करना है।

वेदांत की भाष्य परंपरा में अनुबंधचतुष्टय को और अधिक व्यवस्थित रूप प्राप्त हुआ। आदि शंकराचार्य ने अपने *ब्रह्मसूत्र-भाष्य* की प्रस्तावना में अधिकारी, विषय, संबंध एवं प्रयोजन का विशद विवेचन करते हुए यह स्पष्ट किया कि ब्रह्मविद्या का अध्ययन केवल बौद्धिक जिज्ञासा के लिए नहीं, बल्कि आत्मसाक्षात्कार एवं अविद्या-निवृत्ति के लिए है। इसी प्रकार रामानुजाचार्य एवं मध्वाचार्य ने अपने-अपने सिद्धांतों के अनुरूप इन चारों अंगों की व्याख्या करते हुए वेदांत अध्ययन की अनिवार्य पूर्वापेक्षा के रूप में अनुबंधचतुष्टय को स्वीकार किया।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि वेदांत के प्रमुख ग्रंथों में अनुबंधचतुष्टय केवल प्रारंभिक औपचारिक सिद्धांत नहीं, बल्कि समस्त वेदांत दर्शन की अध्ययन-पद्धति एवं ज्ञानमीमांसा का आधार है। उपनिषद् ब्रह्मविद्या का प्रतिपादन करते हैं, ब्रह्मसूत्र उसे तार्किक एवं दार्शनिक आधार प्रदान करते हैं तथा श्रीमद्भगवद्गीता उसे व्यावहारिक जीवन में लागू करने का मार्ग दिखाती है। इन तीनों ग्रंथों में अनुबंधचतुष्टय अध्ययनकर्ता को यह स्पष्ट करता है कि ज्ञान का अधिकारी कौन है, ज्ञान का विषय क्या है, शास्त्र उस ज्ञान का प्रमाण कैसे है तथा उस ज्ञान का अंतिम उद्देश्य आत्मसाक्षात्कार एवं मोक्ष की प्राप्ति है। अतः अनुबंधचतुष्टय वेदांत दर्शन के सम्यक् अध्ययन की आधारशिला एवं उसकी दार्शनिक संरचना का अनिवार्य अंग है।

शंकराचार्य, रामानुजाचार्य एवं मध्वाचार्य के मतों में अनुबंधचतुष्टय

वेदांत दर्शन की विभिन्न परंपराओं में अनुबंधचतुष्टय को शास्त्र-अध्ययन की अनिवार्य आधारभूमि के रूप में स्वीकार किया गया है। यद्यपि आदि शंकराचार्य, रामानुजाचार्य तथा मध्वाचार्य के दार्शनिक मतों में ब्रह्म, जीव एवं जगत के संबंध को लेकर मूलभूत वैचारिक भिन्नताएँ हैं, तथापि तीनों आचार्य इस तथ्य पर सहमत हैं कि वेदांत का अध्ययन तभी फलदायी है जब अधिकारी, विषय, संबंध तथा प्रयोजन का सम्यक् ज्ञान हो। इन तीनों ने अपने-अपने *ब्रह्मसूत्र-भाष्य* एवं अन्य ग्रंथों में अनुबंधचतुष्टय की व्याख्या अपने दार्शनिक सिद्धांतों के अनुरूप की है।

आदि शंकराचार्य के अद्वैत वेदांत में अनुबंधचतुष्टय का केंद्रबिंदु **ब्रह्मज्ञान** है। उनके अनुसार ब्रह्म ही एकमात्र परम सत्य है तथा जगत मायिक और अनित्य है। इसलिए वेदांत का अधिकारी वही साधक है जो **साधन-चतुष्टय** विवेक, वैराग्य, षट्सम्पत्ति तथा मुमुक्षुत्व से सम्पन्न हो। शंकराचार्य के मत में वेदांत का विषय जीव और ब्रह्म की अभिन्नता का ज्ञान है, जिसका प्रतिपादन उपनिषदों के महावाक्यों द्वारा किया गया है। शास्त्र और ब्रह्मविद्या के मध्य प्रतिपादक-प्रतिपाद्य संबंध स्थापित करते हुए वे शास्त्र को ब्रह्मज्ञान का प्रमाण मानते हैं। उनके अनुसार अनुबंधचतुष्टय का अंतिम प्रयोजन अविद्या का नाश, आत्मसाक्षात्कार तथा जीव-ब्रह्म ऐक्य की अनुभूति के माध्यम से मोक्ष की प्राप्ति है। इस प्रकार शंकराचार्य के यहाँ ज्ञान ही मोक्ष का प्रमुख साधन है। रामानुजाचार्य के विशिष्टाद्वैत वेदांत में अनुबंधचतुष्टय की व्याख्या भक्ति एवं ईश्वर-कृपा के आलोक में की गई है। उनके अनुसार ब्रह्म अर्थात् नारायण ही परम सत्य है तथा जीव एवं जगत ब्रह्म के शरीर या विशिष्ट रूप हैं। अधिकारी वह है जो शास्त्रों में श्रद्धा रखता हो, सदाचार का पालन करता हो तथा ईश्वर-भक्ति के लिए समर्पित हो। वेदांत का विषय परमात्मा का सगुण एवं सविशेष स्वरूप है। संबंध के रूप में वे शास्त्र को परमात्मा के यथार्थ ज्ञान का प्रमाण

मानते हैं। प्रयोजन के रूप में वे केवल ज्ञान नहीं, बल्कि ज्ञानयुक्त भक्ति, प्रपत्ति (पूर्ण आत्मसमर्पण) तथा ईश्वर की कृपा द्वारा मोक्ष की प्राप्ति को स्वीकार करते हैं। इस प्रकार रामानुजाचार्य के मत में अनुबंधचतुष्टय का व्यावहारिक स्वरूप भक्तियोग से अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है।

मध्वाचार्य के द्वैत वेदांत में अनुबंधचतुष्टय का आधार **जीव और ईश्वर की शाश्वत भिन्नता** है। उनके अनुसार परमात्मा विष्णु सर्वश्रेष्ठ एवं स्वतंत्र सत्ता हैं, जबकि जीव सदैव उनके आश्रित हैं। अधिकारी वही है जो धर्म, भक्ति एवं शास्त्रों में दृढ़ आस्था रखता हो तथा ईश्वर की शरण ग्रहण करने के लिए तत्पर हो। वेदांत का विषय परमात्मा की सर्वोच्च सत्ता तथा जीव-ईश्वर के वास्तविक भेद का प्रतिपादन है। संबंध के रूप में शास्त्रों को ईश्वर-प्रदत्त एवं प्रमाणिक ज्ञान का स्रोत माना गया है। प्रयोजन का लक्ष्य ईश्वर की अनन्य भक्ति, दिव्य कृपा तथा मोक्ष की प्राप्ति है, जहाँ जीव अपनी स्वतंत्र सत्ता बनाए रखते हुए परमात्मा के सान्निध्य का आनंद प्राप्त करता है। इस प्रकार मध्वाचार्य ज्ञान की अपेक्षा भक्ति एवं ईश्वरानुग्रह को अधिक महत्व देते हैं।

यद्यपि इन तीनों आचार्यों के दार्शनिक निष्कर्षों में महत्वपूर्ण मतभेद हैं, फिर भी अनुबंधचतुष्टय के मूल ढाँचे को सभी ने समान रूप से स्वीकार किया है। सभी के अनुसार अधिकारी की पात्रता, शास्त्र के प्रतिपाद्य विषय की स्पष्टता, शास्त्र और विषय का संबंध तथा अध्ययन का अंतिम प्रयोजन अनिवार्य हैं। अंतर केवल इतना है कि शंकराचार्य ज्ञान को मोक्ष का प्रमुख साधन मानते हैं, रामानुजाचार्य ज्ञान और भक्ति के समन्वय पर बल देते हैं, जबकि मध्वाचार्य भक्ति एवं ईश्वर-कृपा को सर्वोच्च महत्व प्रदान करते हैं। इस प्रकार अनुबंधचतुष्टय वेदांत की सभी प्रमुख परंपराओं में समान रूप से स्वीकार किया गया एक मौलिक सिद्धांत है, जिसकी व्याख्या प्रत्येक आचार्य ने अपने दार्शनिक मत एवं आध्यात्मिक दृष्टिकोण के अनुरूप की है। यह सिद्धांत वेदांत अध्ययन की वैज्ञानिकता, दार्शनिक गहराई तथा आध्यात्मिक उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए भारतीय ज्ञान-परंपरा की समृद्धि का महत्वपूर्ण प्रमाण प्रस्तुत करता है।

अनुबंधचतुष्टय एवं साधन-चतुष्टय का संबंध

वेदांत दर्शन में **अनुबंधचतुष्टय** और **साधन-चतुष्टय** दो अत्यंत महत्वपूर्ण अवधारणाएँ हैं, जो ब्रह्मविद्या के अध्ययन एवं आत्मसाक्षात्कार की प्रक्रिया में परस्पर पूरक मानी जाती हैं। अनुबंधचतुष्टय शास्त्र-अध्ययन की रूपरेखा एवं उद्देश्य को स्पष्ट करता है, जबकि साधन-चतुष्टय उस आंतरिक योग्यता या आध्यात्मिक पात्रता का निर्धारण करता है, जिसके बिना वेदांत का यथार्थ ज्ञान प्राप्त नहीं किया जा सकता। दूसरे शब्दों में, अनुबंधचतुष्टय अध्ययन की बाह्य एवं बौद्धिक संरचना प्रस्तुत करता है, जबकि साधन-चतुष्टय साधक के अंतःकरण की शुद्धि एवं मानसिक तैयारी का आधार है। इस प्रकार दोनों का संबंध साध्य और साधन, सिद्धांत और व्यवहार तथा ज्ञान और साधना के समन्वित रूप में समझा जाता है।

अनुबंधचतुष्टय का प्रथम अंग **अधिकारी** है, और इसी का सीधा संबंध साधन-चतुष्टय से स्थापित होता है। वेदांताचार्यों के अनुसार ब्रह्मविद्या का अधिकारी वही व्यक्ति है, जिसमें साधन-चतुष्टय के चारों गुण विद्यमान हों। ये चार साधन हैं **नित्यानित्य वस्तु विवेक, इहामुत्र फलभोग-विराग, षट्सम्पत्ति** (शम, दम, उपरति, तितिक्षा, श्रद्धा एवं समाधान) तथा **मुमुक्षुत्व**। नित्यानित्य वस्तु विवेक के माध्यम से साधक शाश्वत और नश्वर का यथार्थ ज्ञान प्राप्त करता है। वैराग्य उसे सांसारिक विषयों के प्रति आसक्ति से मुक्त करता है। षट्सम्पत्ति मन, इन्द्रियों एवं चित्त को संयमित कर आध्यात्मिक स्थिरता प्रदान करती है, जबकि मुमुक्षुत्व मोक्ष प्राप्त करने की तीव्र अभिलाषा का प्रतीक है। इन गुणों के बिना वेदांत का अध्ययन केवल बौद्धिक चर्चा बनकर रह जाता है और आत्मानुभूति संभव नहीं हो पाती।

अनुबंधचतुष्टय का दूसरा अंग **विषय** है, जिसका संबंध ब्रह्म, आत्मा तथा उनके वास्तविक स्वरूप के ज्ञान से है। इस सूक्ष्म विषय को समझने के लिए साधक में विवेक, एकाग्रता और अंतःकरण की पवित्रता आवश्यक होती है, जो साधन-चतुष्टय के अभ्यास से विकसित होती है। इसी प्रकार अनुबंधचतुष्टय का तीसरा अंग **संबंध** शास्त्र और प्रतिपाद्य विषय के मध्य प्रतिपादक-प्रतिपाद्य संबंध को स्पष्ट करता है। शास्त्र तभी प्रमाण बनते हैं जब साधक श्रद्धा एवं मनोनिग्रह के साथ उनका अध्ययन करे। यह श्रद्धा और मानसिक अनुशासन भी साधन-चतुष्टय के महत्वपूर्ण अंग हैं। अनुबंधचतुष्टय का चौथा अंग **प्रयोजन** है, जिसका अंतिम लक्ष्य अविद्या का नाश, आत्मसाक्षात्कार एवं मोक्ष की प्राप्ति है। साधन-चतुष्टय इस प्रयोजन की प्राप्ति के लिए आवश्यक आध्यात्मिक तैयारी प्रदान करता है। अतः अनुबंधचतुष्टय लक्ष्य का निर्धारण करता है, जबकि साधन-चतुष्टय उस लक्ष्य तक पहुँचने की आवश्यक योग्यता एवं साधना का मार्ग प्रशस्त करता है।

आदि शंकराचार्य ने अपने *विवेकचूड़ामणि* तथा *ब्रह्मसूत्र-भाष्य* में साधन-चतुष्टय को ब्रह्मज्ञान की अनिवार्य पूर्वशर्त माना है। उनके अनुसार जो साधक विवेक, वैराग्य, षट्सम्पत्ति और मुमुक्षुत्व से सम्पन्न नहीं है, वह वेदांत के वास्तविक अर्थ को ग्रहण करने में सक्षम नहीं हो सकता। इसी प्रकार रामानुजाचार्य और मध्वाचार्य ने भी श्रद्धा, भक्ति, सदाचार और ईश्वर-समर्पण को अधिकारी की आवश्यक योग्यताओं के रूप में स्वीकार किया है। यद्यपि उनकी व्याख्याओं में दार्शनिक भिन्नताएँ हैं, फिर भी सभी इस बात पर सहमत हैं कि बिना आंतरिक पात्रता के शास्त्र का अध्ययन अपेक्षित फल नहीं दे सकता। अतः यह स्पष्ट होता है कि अनुबंधचतुष्टय एवं साधन-चतुष्टय का संबंध अत्यंत घनिष्ठ एवं अविभाज्य है। अनुबंधचतुष्टय यह बताता है कि शास्त्र का अध्ययन किसके लिए, किस उद्देश्य से और किस विषय पर किया जाना चाहिए, जबकि साधन-चतुष्टय यह सुनिश्चित करता है कि अध्ययनकर्ता उस ज्ञान को ग्रहण करने के योग्य है या नहीं। दोनों मिलकर वेदांत की ज्ञान-परंपरा को व्यवस्थित, अनुशासित और आध्यात्मिक रूप से सार्थक बनाते हैं। आधुनिक शिक्षा एवं अनुसंधान की दृष्टि से भी यह संबंध अत्यंत प्रासंगिक है, क्योंकि किसी भी ज्ञान की सफलता केवल विषय-वस्तु पर नहीं, बल्कि अध्ययनकर्ता की पात्रता, नैतिकता, एकाग्रता और उद्देश्यपूर्ण दृष्टिकोण पर भी निर्भर करती है। इसलिए अनुबंधचतुष्टय और साधन-चतुष्टय का समन्वय वेदांत दर्शन की अध्ययन-पद्धति का मूल आधार तथा आत्मज्ञान की प्राप्ति का अनिवार्य मार्ग माना जाता है।

आधुनिक शिक्षा एवं अनुसंधान में अनुबंधचतुष्टय की प्रासंगिकता

भारतीय ज्ञान-परंपरा में **अनुबंधचतुष्टय** केवल वेदांत दर्शन के अध्ययन की प्रस्तावना नहीं है, बल्कि यह ज्ञानार्जन की एक सुव्यवस्थित, तार्किक एवं उद्देश्यपरक पद्धति का प्रतिनिधित्व करता है। आधुनिक शिक्षा एवं अनुसंधान के युग में, जहाँ ज्ञान का विस्तार निरंतर हो रहा है और शोध के नए-नए क्षेत्र विकसित हो रहे हैं, वहाँ अनुबंधचतुष्टय की अवधारणा अत्यंत प्रासंगिक सिद्ध होती है। इसके चारों अंग, **अधिकारी, विषय, संबंध एवं प्रयोजन,** आज की शिक्षण एवं शोध प्रणाली के मूलभूत सिद्धांतों से गहरा साम्य रखते हैं। आधुनिक अनुसंधान में शोधकर्ता की योग्यता, शोध-विषय का चयन, अध्ययन की उपयोगिता तथा अनुसंधान के उद्देश्य को स्पष्ट करना अनिवार्य माना जाता है। यह संपूर्ण प्रक्रिया वस्तुतः अनुबंधचतुष्टय के सिद्धांतों का ही आधुनिक रूप है।

अनुबंधचतुष्ट्य का प्रथम अंग **अधिकारी** आधुनिक शिक्षा में विद्यार्थी, शिक्षक एवं शोधकर्ता की बौद्धिक, नैतिक तथा व्यावसायिक पात्रता का प्रतीक है। किसी भी शोध या उच्च शिक्षा कार्यक्रम में प्रवेश के लिए आवश्यक शैक्षणिक योग्यता, विषय का आधारभूत ज्ञान, अनुसंधान कौशल, तार्किक चिंतन, नैतिकता एवं अनुशासन अपेक्षित होते हैं। यह व्यवस्था वेदांत में वर्णित अधिकारी की अवधारणा से पूर्णतः मेल खाती है। जिस प्रकार वेदांत में साधन-चतुष्टय से सम्पन्न साधक को ही ब्रह्मविद्या का अधिकारी माना गया है, उसी प्रकार आधुनिक अनुसंधान में भी प्रशिक्षित, निष्पक्ष, जिज्ञासु एवं उत्तरदायी शोधकर्ता ही गुणवत्तापूर्ण अनुसंधान करने में सक्षम होता है।

अनुबंधचतुष्ट्य का दूसरा अंग **विषय** आधुनिक अनुसंधान में शोध समस्या अथवा अध्ययन-विषय के निर्धारण से संबंधित है। किसी भी शोध की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि उसका विषय स्पष्ट, नवीन, प्रासंगिक एवं अनुसंधान योग्य हो। अस्पष्ट या अनावश्यक विषय पर किया गया अध्ययन अपेक्षित परिणाम प्रदान नहीं कर सकता। इसी प्रकार वेदांत में भी प्रतिपाद्य विषय का स्पष्ट निर्धारण आवश्यक माना गया है। आधुनिक शोध-पद्धति में शोध प्रश्न, परिकल्पना, उद्देश्य एवं अध्ययन की सीमाओं का निर्धारण उसी प्रकार किया जाता है, जैसे वेदांत में विषय का स्वरूप निर्धारित किया जाता है।

अनुबंधचतुष्ट्य का तीसरा अंग **संबंध** आधुनिक अनुसंधान में शोध-विषय, उपलब्ध साहित्य, अनुसंधान पद्धति तथा निष्कर्षों के मध्य तार्किक संबंध स्थापित करने का आधार है। शोधकर्ता को यह स्पष्ट करना होता है कि उसका अध्ययन पूर्ववर्ती अनुसंधानों से किस प्रकार संबंधित है, उसका सैद्धांतिक आधार क्या है तथा वह किस ज्ञान-अंतर को पूरा करेगा। वेदांत में शास्त्र और प्रतिपाद्य विषय के मध्य प्रतिपादक-प्रतिपाद्य संबंध की जो अवधारणा है, वही आधुनिक शोध में सैद्धांतिक रूपरेखा, साहित्य समीक्षा तथा अनुसंधान की वैधता के रूप में दिखाई देती है। इससे अध्ययन की विश्वसनीयता एवं वैज्ञानिकता सुनिश्चित होती है।

अनुबंधचतुष्ट्य का चौथा अंग **प्रयोजन** आधुनिक शिक्षा एवं अनुसंधान में सबसे अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। प्रत्येक शोध का एक स्पष्ट उद्देश्य होना चाहिए, जिससे समाज, शिक्षा, विज्ञान अथवा मानव जीवन को प्रत्यक्ष या परोक्ष लाभ प्राप्त हो। केवल उपाधि प्राप्त करने या औपचारिकता पूरी करने के लिए किया गया अनुसंधान दीर्घकालीन उपयोगिता नहीं रखता। वेदांत में प्रयोजन मोक्ष एवं आत्मज्ञान है, जबकि आधुनिक अनुसंधान में प्रयोजन ज्ञान का विस्तार, सामाजिक समस्याओं का समाधान, नीतिगत सुधार, तकनीकी नवाचार तथा मानव कल्याण है। इस प्रकार दोनों ही परंपराओं में अध्ययन का उद्देश्य मानव जीवन को अधिक सार्थक एवं उपयोगी बनाना है।

इसी प्रकार National Education Policy 2020 ने भारतीय ज्ञान-परंपरा, आलोचनात्मक चिंतन, बहुविषयक शिक्षा तथा मूल्य-आधारित शिक्षण को प्रोत्साहित किया है। अनुबंधचतुष्ट्य की अवधारणा इन सभी उद्देश्यों के साथ गहरा सामंजस्य स्थापित करती है। यह विद्यार्थियों एवं शोधार्थियों को केवल सूचना-संग्रह तक सीमित नहीं रखती, बल्कि उन्हें उद्देश्यपूर्ण चिंतन, नैतिक अनुसंधान, तार्किक विश्लेषण एवं समाजोपयोगी ज्ञान-सृजन की दिशा में प्रेरित करती है।

अतः यह कहा जा सकता है कि अनुबंधचतुष्ट्य आज भी आधुनिक शिक्षा एवं अनुसंधान के लिए अत्यंत प्रासंगिक और प्रेरणादायक सिद्धांत है। यह अध्ययनकर्ता की पात्रता, विषय की स्पष्टता, ज्ञान की प्रामाणिकता तथा अनुसंधान के उद्देश्य को एक समन्वित दृष्टि प्रदान करता है। यदि वर्तमान शिक्षा प्रणाली एवं अनुसंधान प्रक्रिया में अनुबंधचतुष्ट्य के सिद्धांतों को प्रभावी रूप से अपनाया जाए, तो शिक्षा अधिक मूल्यपरक, अनुसंधान अधिक गुणवत्तापूर्ण तथा ज्ञान अधिक समाजोपयोगी बन सकता है। इस प्रकार अनुबंधचतुष्ट्य भारतीय ज्ञान-परंपरा की एक कालजयी अवधारणा है, जो प्राचीन दर्शन और आधुनिक अकादमिक अनुसंधान के मध्य एक सशक्त सेतु का कार्य करती है।

समकालीन संदर्भ में अनुबंधचतुष्ट्य का महत्व

वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में ज्ञान, विज्ञान, प्रौद्योगिकी तथा सूचना के तीव्र विस्तार ने शिक्षा, अनुसंधान एवं मानव जीवन की कार्यप्रणाली में व्यापक परिवर्तन उत्पन्न किए हैं। डिजिटल युग में जहाँ सूचनाओं की उपलब्धता अत्यंत सरल हो गई है, वहीं ज्ञान की प्रामाणिकता, उद्देश्यपूर्ण अध्ययन, नैतिकता तथा विवेकपूर्ण निर्णय की आवश्यकता पहले से अधिक बढ़ गई है। ऐसे समय में वेदांत दर्शन में प्रतिपादित **अनुबंधचतुष्ट्य** की अवधारणा अत्यंत प्रासंगिक सिद्ध होती है। अधिकारी, विषय, संबंध एवं प्रयोजन जैसे इसके चार आधारभूत तत्व केवल शास्त्र-अध्ययन तक सीमित नहीं हैं, बल्कि शिक्षा, अनुसंधान, प्रशासन, नेतृत्व, नीति-निर्माण, व्यावसायिक जीवन तथा व्यक्तिगत विकास के लिए भी समान रूप से उपयोगी हैं। यह अवधारणा व्यक्ति को यह सिखाती है कि किसी भी कार्य को प्रारंभ करने से पूर्व अपनी पात्रता, उद्देश्य, विषय की स्पष्टता तथा उसके अपेक्षित परिणामों का सम्यक् विचार करना आवश्यक है।

समकालीन शिक्षा प्रणाली में अनुबंधचतुष्ट्य का महत्व विशेष रूप से दृष्टिगोचर होता है। आज शिक्षा का उद्देश्य केवल डिग्री प्राप्त करना या रोजगार अर्जित करना नहीं, बल्कि व्यक्तित्व का समग्र विकास, आलोचनात्मक चिंतन, नैतिक मूल्यों का संवर्धन तथा समाजोपयोगी ज्ञान का निर्माण भी है। अनुबंधचतुष्ट्य का प्रथम अंग **अधिकारी** विद्यार्थियों, शिक्षकों एवं शोधार्थियों में बौद्धिक क्षमता, अनुशासन, नैतिकता, जिज्ञासा तथा उत्तरदायित्व की भावना विकसित करने पर बल देता है। यह शिक्षा को केवल सूचना-संग्रह की प्रक्रिया न मानकर आत्मविकास एवं चरित्र निर्माण का माध्यम बनाता है। इसी प्रकार **विषय** का सिद्धांत विद्यार्थियों को अपनी रुचि, योग्यता तथा सामाजिक आवश्यकता के अनुरूप विषय चयन करने की प्रेरणा देता है, जिससे अध्ययन अधिक प्रभावी एवं सार्थक बनता है।

अनुसंधान के क्षेत्र में अनुबंधचतुष्ट्य की प्रासंगिकता और भी अधिक स्पष्ट होती है। आज गुणवत्तापूर्ण शोध के लिए अनुसंधान समस्या की स्पष्टता, उद्देश्य की निश्चितता, उपयुक्त शोध-पद्धति, नैतिक मानकों का पालन तथा समाजोपयोगी निष्कर्षों को अनिवार्य माना जाता है। अनुबंधचतुष्ट्य का **संबंध** शोधकर्ता को यह समझने में सहायता करता है कि अध्ययन-विषय, उपलब्ध साहित्य, अनुसंधान-पद्धति एवं निष्कर्षों के मध्य तार्किक एवं वैज्ञानिक संबंध कैसे स्थापित किया जाए। वहीं **प्रयोजन** यह सुनिश्चित करता है कि अनुसंधान केवल औपचारिक उपाधि प्राप्त करने तक सीमित न रहकर समाज, शिक्षा, पर्यावरण, अर्थव्यवस्था एवं मानव कल्याण के लिए उपयोगी सिद्ध हो। इस प्रकार अनुबंधचतुष्ट्य आधुनिक अनुसंधान को उद्देश्यपूर्ण, उत्तरदायी एवं मूल्यपरक दिशा प्रदान करता है।

समकालीन सामाजिक एवं व्यावसायिक जीवन में भी अनुबंधचतुष्ट्य अत्यंत उपयोगी सिद्ध होता है। प्रशासन, उद्योग, न्यायपालिका, चिकित्सा, प्रबंधन, मीडिया तथा सूचना-प्रौद्योगिकी जैसे क्षेत्रों में किसी भी निर्णय की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि निर्णय लेने वाला व्यक्ति योग्य हो, समस्या का

सही आकलन किया गया हो, उपलब्ध संसाधनों एवं उद्देश्यों के बीच उचित संबंध स्थापित किया गया हो तथा निर्णय का अंतिम उद्देश्य जनहित एवं दीर्घकालिक विकास हो। अनुबंधचतुष्ट्य इन सभी आयामों को एक समन्वित दृष्टि प्रदान करता है। यह व्यक्ति को तर्क, विवेक, उत्तरदायित्व तथा नैतिकता के आधार पर निर्णय लेने के लिए प्रेरित करता है, जिससे व्यक्तिगत एवं संस्थागत कार्यों की गुणवत्ता में वृद्धि होती है।

वर्तमान समय में कृत्रिम बुद्धिमत्ता, डिजिटल मीडिया एवं सोशल मीडिया के व्यापक प्रभाव ने ज्ञान के प्रसार को तीव्र बनाया है, किंतु इसके साथ ही भ्रम, मिथ्या सूचना, बौद्धिक संपदा के उल्लंघन तथा नैतिक चुनौतियाँ भी बढ़ी हैं। ऐसी स्थिति में अनुबंधचतुष्ट्य का अधिकारी सिद्धांत विवेकपूर्ण चिंतन, विषय सिद्धांत प्रामाणिक ज्ञान के चयन, संबंध सिद्धांत तथ्यों के सम्यक् विश्लेषण तथा प्रयोजन सिद्धांत ज्ञान के लोकहितकारी उपयोग की प्रेरणा देता है। इस दृष्टि से अनुबंधचतुष्ट्य डिजिटल युग में भी बौद्धिक अनुशासन, अकादमिक सत्यनिष्ठा एवं उत्तरदायी ज्ञान-संस्कृति की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

समकालीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था में भी अनुबंधचतुष्ट्य की प्रासंगिकता निरंतर बढ़ रही है। National Education Policy 2020 भारतीय ज्ञान-परंपरा, बहुविषयक शिक्षा, आलोचनात्मक चिंतन, नैतिक मूल्यों एवं अनुभवात्मक अधिगम को विशेष महत्व देती है। इसी प्रकार अनुसंधान की गुणवत्ता, अकादमिक सत्यनिष्ठा तथा मौलिकता पर बल देती है। अनुबंधचतुष्ट्य इन सभी उद्देश्यों को दार्शनिक आधार प्रदान करता है और यह दर्शाता है कि भारतीय ज्ञान-परंपरा के सिद्धांत आज भी आधुनिक शिक्षा एवं अनुसंधान की आवश्यकताओं के अनुरूप हैं। यह केवल अतीत की विरासत नहीं, बल्कि भविष्य की शिक्षा-दृष्टि के लिए भी एक सुदृढ़ मार्गदर्शक सिद्धांत है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि अनुबंधचतुष्ट्य एक कालातीत एवं सार्वभौमिक अवधारणा है, जिसकी उपयोगिता केवल वेदांत दर्शन तक सीमित नहीं है। यह जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में लक्ष्य-निर्धारण, योग्य नेतृत्व, नैतिक आचरण, तर्कसंगत निर्णय, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तथा समाजोपयोगी अनुसंधान के लिए मार्गदर्शन प्रदान करता है। यदि इसके सिद्धांतों को आधुनिक शिक्षा, प्रशासन, अनुसंधान एवं सामाजिक जीवन में व्यवहारिक रूप से अपनाया जाए, तो ज्ञान अधिक प्रामाणिक, निर्णय अधिक उत्तरदायी तथा विकास अधिक मानवीय एवं समावेशी बन सकता है। इस प्रकार अनुबंधचतुष्ट्य भारतीय ज्ञान-परंपरा की ऐसी अमूल्य देन है, जो वर्तमान और भविष्य दोनों के लिए समान रूप से प्रेरणादायक एवं प्रासंगिक बनी हुई है।

निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन के आधार पर यह निष्कर्ष स्पष्ट रूप से स्थापित होता है कि **अनुबंधचतुष्ट्य** वेदांत दर्शन की एक मूलभूत एवं अनिवार्य अवधारणा है, जो किसी भी शास्त्र के अध्ययन को उद्देश्यपूर्ण, व्यवस्थित एवं फलदायी बनाती है। भारतीय दार्शनिक परंपरा में ज्ञान को केवल बौद्धिक उपलब्धि नहीं, बल्कि आत्मबोध, नैतिक विकास एवं मोक्ष का साधन माना गया है। इसी कारण वेदांताचार्यों ने किसी भी ग्रंथ के अध्ययन से पूर्व अधिकारी, विषय, संबंध एवं प्रयोजन का निर्धारण आवश्यक माना है। अनुबंधचतुष्ट्य के माध्यम से यह स्पष्ट हो जाता है कि शास्त्र का अध्ययन कौन करे, अध्ययन का विषय क्या है, शास्त्र और विषय के मध्य क्या संबंध है तथा अध्ययन का अंतिम उद्देश्य क्या है। इस प्रकार यह सिद्धांत वेदांत की ज्ञानमीमांसा, शिक्षाशास्त्र तथा साधना-पद्धति का आधार बनकर ज्ञान को दिशा एवं सार्थकता प्रदान करता है।

अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि वेदांत के प्रमुख ग्रंथ—उपनिषद्, *ब्रह्मसूत्र* तथा *श्रीमद्भगवद्गीता*—सभी में अनुबंधचतुष्ट्य की भावना प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से विद्यमान है। आदि शंकराचार्य, रामानुजाचार्य तथा मध्वाचार्य ने अपने-अपने दार्शनिक मतों के अनुरूप इसकी व्याख्या करते हुए इसे वेदांत अध्ययन की अनिवार्य पूर्वभूमि स्वीकार किया है। यद्यपि उनके सिद्धांतों में ब्रह्म, जीव एवं जगत के संबंध को लेकर वैचारिक भिन्नताएँ हैं, तथापि सभी इस तथ्य पर सहमत हैं कि योग्य अधिकारी, स्पष्ट विषय, प्रमाणिक शास्त्र तथा निश्चित प्रयोजन के बिना ब्रह्मविद्या का यथार्थ ज्ञान संभव नहीं है। इससे यह सिद्ध होता है कि अनुबंधचतुष्ट्य वेदांत की सभी प्रमुख परंपराओं में समान रूप से स्वीकार किया गया एक सार्वभौमिक सिद्धांत है।

यह शोध यह भी दर्शाता है कि अनुबंधचतुष्ट्य और साधन-चतुष्टय का संबंध अत्यंत घनिष्ठ है। जहाँ अनुबंधचतुष्ट्य अध्ययन की बाह्य संरचना एवं उद्देश्य को स्पष्ट करता है, वहीं साधन-चतुष्टय साधक की आंतरिक पात्रता एवं आध्यात्मिक तैयारी सुनिश्चित करता है। इस प्रकार दोनों मिलकर ज्ञान, साधना और आत्मानुभूति की समन्वित प्रक्रिया का निर्माण करते हैं। यही कारण है कि वेदांत में ज्ञान केवल सूचना या तर्क का विषय न होकर चरित्र, आचरण एवं आध्यात्मिक अनुशासन से जुड़ा हुआ है।

समकालीन शिक्षा एवं अनुसंधान के संदर्भ में भी अनुबंधचतुष्ट्य की उपयोगिता अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्ध होती है। आधुनिक शोध-पद्धति में शोधकर्ता की योग्यता, शोध-विषय का चयन, अनुसंधान की प्रासंगिकता तथा उद्देश्य की स्पष्टता को जो महत्व दिया जाता है, वह अनुबंधचतुष्ट्य की मूल अवधारणा से पूर्णतः सामंजस्य रखता है। वर्तमान समय में मूल्यपरक शिक्षा, अनुसंधान नैतिकता, अकादमिक सत्यनिष्ठा, आलोचनात्मक चिंतन तथा समाजोपयोगी ज्ञान-सृजन की आवश्यकता निरंतर बढ़ रही है। ऐसे परिवेश में अनुबंधचतुष्ट्य भारतीय ज्ञान-परंपरा की एक ऐसी कालजयी अवधारणा के रूप में सामने आता है, जो शिक्षा को केवल व्यावसायिक सफलता का माध्यम न मानकर व्यक्तित्व विकास, नैतिक चेतना एवं सामाजिक उत्तरदायित्व का आधार बनाता है।

अतः यह कहा जा सकता है कि अनुबंधचतुष्ट्य केवल वेदांत दर्शन का एक प्रारंभिक सिद्धांत नहीं, बल्कि ज्ञानार्जन की एक वैज्ञानिक, तार्किक एवं जीवनोपयोगी पद्धति है। इसकी प्रासंगिकता प्राचीन गुरुकुल परंपरा से लेकर आधुनिक विश्वविद्यालयीय शिक्षा, अनुसंधान, नेतृत्व, नीति-निर्माण तथा व्यावसायिक जीवन तक समान रूप से बनी हुई है। यदि आधुनिक शिक्षा एवं अनुसंधान में अनुबंधचतुष्ट्य के सिद्धांतों योग्य अधिकारी, स्पष्ट विषय, प्रमाणिक संबंध तथा उद्देश्यपूर्ण प्रयोजन—को व्यवहार में अपनाया जाए, तो ज्ञान अधिक सार्थक, अनुसंधान अधिक विश्वसनीय तथा शिक्षा अधिक मूल्यपरक बन सकती है। इस प्रकार अनुबंधचतुष्ट्य भारतीय ज्ञान-परंपरा की अमूल्य बौद्धिक धरोहर है, जो वर्तमान एवं भविष्य दोनों के लिए एक सशक्त दार्शनिक एवं शैक्षिक मार्गदर्शक सिद्ध होती है।

संदर्भ

1. ईश्वरकृष्ण. (2021). *सांख्यकारिका* (हिन्दी व्याख्या सहित). वाराणसी: चौखम्बा।
2. कठोपनिषद्। (2022). गोरखपुर: गीता प्रेस।
3. केनोपनिषद्। (2022). गोरखपुर: गीता प्रेस।

4. गम्भीरानन्द, स्वामी. (2021). *ब्रह्मसूत्र भाष्य (शंकरभाष्य सहित)*. कोलकाता: अद्वैत आश्रम।
5. गांधी, मोहनदास करमचन्द. (2021). *हिन्द स्वराज*. अहमदाबाद: नवजीवन प्रकाशन।
6. गीता प्रेस. (2022). *श्रीमद्भगवद्गीता (शांकरभाष्य सहित)*. गोरखपुर: गीता प्रेस।
7. तैत्तिरीयोपनिषद्। (2022). गोरखपुर: गीता प्रेस।
8. दासगुप्त, सुरेन्द्रनाथ. (2020). *भारतीय दर्शन का इतिहास*. दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास।
9. नारद भक्ति सूत्र। (2021). गोरखपुर: गीता प्रेस।
10. पतञ्जलि. (2021). *योगसूत्र*. वाराणसी: चौखम्बा संस्कृत सीरीज।
11. पाण्डेय, गोविन्दचन्द्र. (2020). *भारतीय संस्कृति*. नई दिल्ली: नेशनल बुक ट्रस्ट।
12. ब्रहदारण्यक उपनिषद्। (2022). गोरखपुर: गीता प्रेस।
13. बादरायण. (2021). *ब्रह्मसूत्र*. वाराणसी: चौखम्बा विद्याभवन।
14. भगवद्गीता। (2022). गोरखपुर: गीता प्रेस।
15. माण्डूक्य उपनिषद्। (2022). गोरखपुर: गीता प्रेस।
16. मुण्डकोपनिषद्। (2022). गोरखपुर: गीता प्रेस।
17. मनुस्मृति। (2021). वाराणसी: चौखम्बा संस्कृत सीरीज।
18. महाभारत। (2021). गोरखपुर: गीता प्रेस।
19. याज्ञवल्क्य स्मृति। (2021). वाराणसी: चौखम्बा संस्कृत सीरीज।
20. राधाकृष्णन, सर्वपल्ली. (2020). *भारतीय दर्शन* (भाग 1 एवं 2). नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
21. राधाकृष्णन, सर्वपल्ली. (2021). *भारतीय संस्कृति*. नई दिल्ली: राजपाल एंड संस।
22. रामानुजाचार्य. (2021). *श्रीभाष्य*. वाराणसी: चौखम्बा विद्याभवन।
23. रामायण। (2022). गोरखपुर: गीता प्रेस।
24. ऋग्वेद। (2021). गोरखपुर: गीता प्रेस।
25. विवेकानन्द, स्वामी. (2021). *विवेकानन्द साहित्य* (सम्पूर्ण). कोलकाता: अद्वैत आश्रम।
26. विवेकचूडामणि। (2022). गोरखपुर: गीता प्रेस।
27. वेदान्तसार। (2021). वाराणसी: चौखम्बा संस्कृत सीरीज।
28. शंकराचार्य, आदि. (2021). *उपनिषद् भाष्य*. वाराणसी: चौखम्बा।
29. शंकराचार्य, आदि. (2021). *ब्रह्मसूत्र भाष्य*. वाराणसी: चौखम्बा विद्याभवन।
30. शंकराचार्य, आदि. (2021). *विवेकचूडामणि*. गोरखपुर: गीता प्रेस।
31. शर्मा, चन्द्रधर. (2020). *भारतीय दर्शन: आलोचन एवं अनुशीलन*. दिल्ली: मोतीलाल बनारसीदास।
32. शर्मा, रामशरण. (2020). *प्राचीन भारत*. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
33. श्वेताश्वतर उपनिषद्। (2022). गोरखपुर: गीता प्रेस।
34. सत्यानन्द, स्वामी. (2020). *भारतीय ज्ञान परम्परा*. नई दिल्ली: डी.के. प्रिंटवर्ल्ड।
35. संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार. (2023). *भारतीय संस्कृति पर वार्षिक प्रतिवेदन*. नई दिल्ली।
36. शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार. (2020). *राष्ट्रीय शिक्षा नीति–2020*. नई दिल्ली।
37. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग. (2023). *भारतीय ज्ञान प्रणाली हेतु दिशा-निर्देश*. नई दिल्ली: यूजीसी।
38. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद. (2023). *भारतीय ज्ञान परंपरा*. नई दिल्ली: एनसीईआरटी।
39. इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र. (2023). *भारतीय दर्शन एवं सांस्कृतिक विरासत*. नई दिल्ली।
40. भारतीय दार्शनिक अनुसंधान परिषद. (2022). *भारतीय दर्शन: समकालीन अध्ययन*. नई दिल्ली: आईसीपीआर।